॥ लिपि का इतिहास ।

"मानव-भाषा को अंकित करने का साधन ही लिपि है। जब भाषा का कुछ विकास हो गया, तब उसे आँखों के माध्यम से ग्रहण करने हेतु, दूर स्थित किसी व्यक्ति को अपनी भावनाओं से परिचित कराने के लिए अथवा अपने विचारों को फैलाने के लिए, आनेवाली पीढ़ी को अपने द्वारा संचित ज्ञान को हस्तान्तरित करने के लिए विविध प्रकार के जाने-अनजाने प्रयत्न किये जाने लगे। प्रारम्भ में जादू-टोने के लिए खींची गयी लकीरें, धार्मिक प्रतीकों के चित्र, पहचान के लिए चौड़ों इत्यादि पर बनाये गये चित्र, किसी वस्तु को सजाने के लिए बनाये हुए चित्र आदि ही लिपि की शुरुआती मूल सामग्री कही जा सकती है।

अब तक प्राप्त प्राचीनतम सामग्री के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि 40000 ई० पू० तक लेखन की किसी भी व्यवस्थित प्रणाली का विकास विश्व के किसी भी क्षेत्र में नहीं हुआ था। इस प्रकार के प्राचीनतम प्रयास 10,000 ई० पू० से भी कुछ पहले किये गये थे। इसके बीच में — 10,000 ई.पू. से 4000 ई.पू. तक — लिपि का विकास धीरे-धीरे होता रहा।

लिपि के विकास-क्रम का ऐतिहासिक रूप डॉ० भोलानाथ तिवारी के अनुसार इस प्रकार है —

(i) चित्र-लिपि
(ii) सूत्र-लिपि
(iii) प्रतीकात्मक लिपि
(iv) भावमूलक लिपि
(v) भाव ध्वनिमूलक लिपि
(vi) ध्वनिमूलक लिपि

(i) चित्र-लिपि : आदियुगीन मानव के व्यवहार में जो वस्तुएँ आती थीं, उन पर वे प्रायः अनेक प्रकार के जीव-जन्तुओं, प्रतीकों आदि के अभ्यस्थित चित्र खींचा करते थे। ऐसे प्राचीन चित्र दक्षिणी फ्रांस, स्पेन, क्रीट, मेसोपोटामिया, यूनान, इटली, पुर्तगाल, सीरिया, मिस्र, ग्रेट ब्रिटेन आदि देशों में प्राप्त हुए हैं। ये चित्र पत्थर, हड्डी, काठ, सींग, हाथी-दाँत, वृक्षों की छाल, जानवरों की खाल एवं मिट्टी के बर्तनों पर निर्मित हैं।

चित्र लिपि के अन्तर्गत किसी विशेष-वस्तु के लिए उसका चित्र बना दिया जाता था। अनुमान है कि यह लिपि पर्याप्त व्यापक रही होगी, क्योंकि

इसे लोग सर्वत्र समझ लेते थे। इस लिपि में कठिनाइयों और अभावों की ओर विद्वानों ने संकेत किया है। ये निम्नलिखित हैं –

क). इस लिपि में व्यक्तिवाचक संज्ञाओं को प्रकट करने हेतु कोई साधन नहीं था – साधारण मनुष्य का चित्र तो खींचा जा सकता था, किन्तु किसी विशिष्ट व्यक्ति को संकेतित करना सर्वथा सम्भव नहीं था। स्थान अधिक लेती है।

ख). इसमें स्थूल वस्तुओं का चित्रण तो हो सकता था, परन्तु सूक्ष्म भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति असम्भव थी।

ग). अत्यन्त शीघ्रता से इस लिपि का कोई उपयोग सम्भव नहीं था, क्योंकि आवश्यकतानुसार चित्रण करने में पर्याप्त समय की आवश्यकता होती थी।

घ). समय अथवा काल की अभिव्यक्ति भी इसके द्वारा सम्भव नहीं थी।

क्रमशः चित्र लिपि प्रतीकात्मक होने लगी। शीघ्रता की स्थिति में किसी व्यक्ति अथवा वस्तु का चित्रण पूर्ण रूप से न करके उसके स्थान पर प्रतीक-मात्र से ही काम चला लिया जाने लगा। ऐसी स्थिति में प्रतीकों को स्मरण रखने की आवश्यकता प्रतीत होने लगी।

(ii) सूत्र-लिपि : सूत्र (रस्सी) में गाँठ लगाकर भावों-विचारों की अभिव्यक्ति-कला 'सूत्र-लिपि' कही जाती है। आजकल भी 'वर्षगाँठ' के अवसर पर इसका उपयोग देखा जा सकता है। सूत्र लिपि के प्रयोग की स्थितियाँ अधोलिखित थीं –

अ). रस्सी में रंग-बिरंगे सूत बाँधकर।
आ). रस्सी को रंग-बिरंगे रंग से रँगकर।
इ). रस्सी अथवा जानवरों की खाल आदि में विभिन्न रंगों के मोती, घोंघे, मूँगे या मनके आदि बाँधकर।
ई). रस्सियों की विभिन्न लम्बाइयाँ बनाकर।
उ). रस्सियों की विभिन्न मोटाइयाँ बनाकर।
ऊ). रस्सियों में भाँति-भाँति की विभिन्न दूरियों पर गाँठें लगाकर।
ए). उपर्युक्त में विभिन्न स्थानों पर विभिन्न लम्बाइयों, मोटाइयों, रंगों की रस्सी बाँधकर।

पीरू देश की 'क्वीपू' लिपि इस लिपि का अच्छा उदाहरण है। चीन, तिब्बत तथा जापान के कुछ स्थानों पर इसका प्रयोग होता था।

(iii) प्रतीकात्मक लिपि : यह भावाभिव्यक्ति की प्रतीकात्मक प्रणाली थी। इसे शुद्ध रूप में लिपि तो नहीं कह सकते, किन्तु दूरस्थ व्यक्ति या व्यक्तियों के लिए यह भावाभिव्यक्ति का एक साधन अवश्य थी। बताया जाता है कि तिब्बती-चीनी सीमा पर मुर्गी के बच्चे का कलेजा, उसकी चर्बी के तीन टुकड़े तथा एक मिर्च, लाल कागज़ में लपेटकर भेजने का अर्थ होता था कि युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। स्काउट में झण्डियों द्वारा बातचीत होती है। विवाह की बात पक्की करने में या किसी शुभ-कार्य (विवाह, धार्मिक अनुष्ठान आदि) में हल्दी भेजकर निमंत्रण दिया जाता है।

स्पष्ट है कि इस प्रकार के प्रतीक अत्यन्त सीमित हैं और इसे सब समझ भी नहीं पाते।

(iv) भावमूलक लिपि : यह वास्तव में चित्र-लिपि से विकसित हुई लिपि है। इसमें स्थूल चित्रण न होकर भावाभिव्यक्ति के निमित्त सूक्ष्म संकेतों का प्रयोग किया जाता था। चित्र-लिपि के एक पैर से मात्र एक पैर की ही अभिव्यक्ति होती थी, किन्तु भावमूलक लिपि में इससे चलने का भाव भी प्रकट होता था। आँखों के साथ ही आँसू चित्रित करने का भाव था – दुखी होना। इस लिपि के प्रमाण उत्तरी अमेरिका, चीन तथा पश्चिमी अफ्रीका आदि देशों में प्राप्त हुए हैं।

इस लिपि को आज के इमोजी (emoji) शैली से समझ सकते हैं। व्हाट्सएप (whats app) पर हँसने-रोने आदि के छोटे-छोटे भावचित्र होते हैं, जिन्हें Internet की भाषा में इमोजी कहा जाता है। इन भाव-चित्रों के अतिरिक्त अन्य प्रकार के संकेत भी इमोजी के रूप में होते हैं।

(v) भाव ध्वनिमूलक लिपि : इस लिपि को भी चित्र-लिपि का ही विकसित रूप कहा जा सकता है। इस लिपि में भावमूलक और ध्वनिमूलक दोनों ही प्रकार के संकेत होते थे। चित्रात्मकता तो इसमें रही ही। मेसोपैटेमियन, मिस्री तथा हित्ती आदि लिपियाँ इसी लिपि के अन्तर्गत आती हैं।

(vi) ध्वनिमूलक लिपि : इस लिपि में संकेतों से किसी वस्तु या भाव की अभिव्यक्ति न करके उसकी ध्वनि को प्रकट करने का विधान है। इस लिपि के दो प्रकार होते हैं –

अ). अक्षरात्मक लिपि – इस लिपि में संकेतों से किसी वस्तु को व्यक्त करने के लिए अक्षरों की सहायता ली जाती है, वर्ण की नहीं। नागरी (देवनागरी) लिपि को अक्षरात्मक लिपि का उदाहरण कह सकते हैं। इसके व्यंजनों में दो ध्वनियाँ होती हैं, जैसे 'क' वर्ण में 'क+अ'। यही कारण है कि व्यवहार में उचित होते हुए भी इस लिपि के वैज्ञानिक विश्लेषण में कठिनाई होती है।

ब). वर्णात्मक लिपि – इस लिपि में प्रत्येक ध्वनि के लिए एक संकेत होता है। इसका वैज्ञानिक विश्लेषण सरलता से किया जा सकता है। रोमन लिपि को इसका उदाहरण कह सकते हैं। लिपि-विकास के इसी क्रम में भारतीय लिपियों का उल्लेख कर देना अनुपयुक्त न होगा। अतः हम भारतीय लिपियों पर अब प्रकाश डालेंगे।

प्राचीन 'भारतीय लिपियों' के अन्तर्गत तीन लिपियों ~~पर अब प्रकाश~~ का व्यवहार बताया जाता है –

१. सिन्धु घाटी की लिपि
२. खरोष्ठी लिपि
३. ब्राह्मी लिपि

१. सिन्धु घाटी की लिपि: इस लिपि का अभी सम्पूर्ण रूप से अध्ययन नहीं हो पाया है, इसलिए इससे सम्बन्धित कई तथ्य अभी अनसुलझे हैं। इसकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में अलग-अलग विद्वानों ने अपनी राय प्रकट की है

(क) एच. हेरास तथा जॉन मार्शल इसे द्रविड़ लिपि मानते हैं, क्योंकि इनके अनुसार सिन्धु घाटी की सभ्यता द्रविड़-सभ्यता थी।

(ख) एल. ए. वैडेल तथा डॉ॰ प्राणनाथ का मानना है कि यह सुमेरी लिपि से विकसित एक लिपि है, क्योंकि 4000 ई. पू. सिन्धु घाटी में सुमेरियन लोग रहते थे इसलिए उनकी भाषा और लिपि भी वहाँ विकसित हुई।

(ग) कुछ विद्वानों का मानना है कि यह लिपि आर्यों द्वारा प्रचलित की गयी, जो कि सिन्धु घाटी के निवासी थे।

सिन्धु घाटी लिपि को भाव-ध्वनिमूलक लिपि माना जाता है। अभी इसके संकेतों की समुचित गणना नहीं की जा सकी है।

२. खरोष्ठी लिपि: इस लिपि में चौथी शताब्दी ई॰ पू॰ से लेकर तीसरी शताब्दी ई॰ तक के प्राचीनतम लेख प्राप्त हुए हैं। इसका नाम 'खरोष्ठी' कैसे पड़ा इस पर विभिन्न मत-मतान्तर उपलब्ध हैं –

(अ) चीनी विश्वकोश 'फा वान-शु-लिन' में यह बताया गया है कि इसका निर्माता कोई 'खरोष्ठी' नामधारी व्यक्ति रहा होगा।

(ब) पश्चिमोत्तर प्रदेश (भारत) के अर्द्ध सभ्य 'खरोष्ठ' जाति के

लोगों की यह लिपि थी, अतः यह 'खरोष्ठी' कहलायी।

(स) कुछ लोगों का मानना है कि यह गदहे की (गधे की) खाल पर लिखी जाती थी, जिसे फ़ारसी में 'खरपोस्त' कहते थे। इसी 'खरपोस्त' का परिवर्तित रूप 'खरोष्ठ' है। इस तरह खरोष्ठी नाम पड़ा।

(द) मध्य एशिया के काशगर-क्षेत्र में यह लिपि व्यवहृत होती थी और काशगर को संस्कृत में 'खरोष्ठ' कहते हैं, अतः यह लिपि 'खरोष्ठी' कही जाने लगी।

(य) डॉ० प्रजिलुस्की का यह मत है कि गधे की खाल पर लिखी जाने के कारण यह 'खरपृष्ठी' कही गयी, जो बाद में 'खरोष्ठी' हो गयी।

(र) अर्मेइक शब्द 'खरोट्ठ' संस्कृत में 'खरोष्ठ' रूप में ग्रहण करके इस लिपि को खरोष्ठी कहा गया।

(ल) डॉ० राजबली पाण्डेय का मत है कि गधे के ओंठ (खर + ओष्ठ) की तरह बेढंगी, ओंडी होने के कारण इसे 'खरोष्ठी' संज्ञा दी गयी।

(व) डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी के मतानुसार हिब्रू भाषा में 'खरोशेथ' एक शब्द है, जिसका अर्थ है – लिखावट। उसी से गृहीत होने के कारण इस लिपि को 'खरोशेथ' कहा गया, जो संस्कृत में 'खरोष्ठ' हो गया।

खरोष्ठी लिपि पर्याप्त अंशों में अक्षरात्मक है।

खरोष्ठी लिपि से जुड़े महत्त्वपूर्ण तथ्य :

(क) इस लिपि के अन्य नाम हैं – बैक्ट्रिअन, पाली, अरिअनोपाली, उत्तरी अशोक, काबुलिअन, और गान्धार आदि।

(ख) मौर्यवंशी राजा अशोक के शाहबाजगढ़ी और मानसेरा के लेखों में यह लिपि प्राप्त होती है। अशोक के पूर्व कोई भी शिलालेख इस लिपि में नहीं प्राप्त होता। अशोक के पश्चात् विभिन्न राजाओं के शिलालेखों तथा सिक्कों पर यह लिपि प्राप्त होती है।

(ग) खरोष्ठी फ़ारसी लिपि की तरह दाहिनी ओर से बायीं ओर लिखी

जाती थी, और इसके ग्यारह वर्ण – क, ज, द, न, ब, य, र, व, ष, स और ह समान उच्चारणवाले अरमइक अक्षरों से मिलते-जुलते हैं।

(घ) खरोष्ठी लिपि के जितने लेख मिले हैं, उनसे पाया जाता है कि उसमें स्वरों तथा उनकी मात्राओं में ह्रस्व - दीर्घ का भेद न था। संयुक्ताक्षर बहुत कम होते थे, जिनका रूप अस्पष्ट और भ्रमोत्पादक था।

(ङ) "खरोष्ठी लिपि का प्रचार लगभग तीसरी शताब्दी तक पंजाब के आस-पास था, किन्तु बाद में उसका स्थान ब्राह्मी ने ही ले लिया। धीरे-धीरे खरोष्ठी का अस्तित्व भारत में समाप्त हो गया।

2. ब्राह्मी लिपि:

(i) यह प्राचीनतम लिपियों में सर्वप्रमुख रही। यह अन्य लिपियों की तुलना में अधिक वैज्ञानिक थी।

(ii) इसमें प्राचीनतम लेख 5वीं शताब्दी ई० पू० से लेकर 350 ई० तक मिलते हैं।

(iii) इसके नामकरण के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों का मानना है कि 'ब्रह्म' अथवा 'ब्रह्मा' शब्द से ही इसका नामकरण हुआ, जबकि एक मान्यता यह भी है कि ब्राह्मण - समाज में प्रयुक्त होने के कारण इसे 'ब्राह्मी' कहा गया।

(iv) ब्राह्मी लिपि के उद्भव (जन्म) के सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार के मत-मतान्तर हैं – यूनानी, सामी, द्राविड़ भाषाओं आदि की लिपियों से इस लिपि की उत्पत्ति मानी जाती है। इस प्रकार की मान्यताओं के पक्ष-विपक्ष में पर्याप्त तर्क उपलब्ध हैं। वस्तुतः जिन लिपियों से इसकी उत्पत्ति मानी जाती है वे सब अपूर्ण हैं अथवा उनमें कुछ कमियाँ हैं। इसलिए परवर्ती विद्वानों का तर्क है कि किसी अपूर्ण लिपि से पूर्ण लिपि का विकास कैसे सम्भव है।

ब्राह्मी लिपि की विशेषताएँ:

01. इसमें सभी वर्ण जिस प्रकार उच्चरित होते हैं, उसी प्रकार लिखे जाते हैं।

02. सभी उच्चरित ध्वनियों के लिए निश्चित चिह्न हैं।

03. ध्वनियों के उच्चारण-स्थान के अनुसार इनके वर्ग सुनियोजित हैं।

04. स्वरों और व्यंजनों की संख्या पर्याप्त है।

05. ह्रस्व और दीर्घ स्वरों के लिए भिन्न-भिन्न चिह्न हैं।

06. स्वरों और व्यंजनों का संयोग मात्राओं द्वारा होता है।

07. अनुस्वार, अनुनासिक और विसर्ग के लिए भी चिह्न हैं।

लिपि-विशेषज्ञ गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने भी ब्राह्मी लिपि को भारतीय आर्यों का अपना आविष्कार माना है। स्पष्ट है कि ब्राह्मी लिपि किसी विदेशी लिपि की न तो अनुकृति है और न ही किसी विदेशी लिपि से प्रसूत हुई है। वरन् यह भारतीय मनीषियों के स्वतन्त्र चिन्तन-मनन का प्रतिफलन है।

ब्राह्मी लिपि का विकास :

अ). भारत की द्रविड़ लिपियों को छोड़कर शेष समस्त लिपियाँ ब्राह्मी लिपि से ही उत्पन्न हुई हैं अथवा विकसित हुई हैं।

आ). मौर्ययुगीन ब्राह्मी लिपि पूर्णतः विकास कर चुकी थी, मात्र द्वित्व व्यंजन ही इसमें नहीं लिखे जा सकते थे। उस समय यह समस्त भारत में प्रचलित थी और सिंहल तक पहुँच गयी थी।

इ). आगे चलकर गुप्तों के शासनकाल में इसे 'गुप्त ब्राह्मी' भी कहा गया। उस समय इसका प्रचार-प्रसार दक्षिण-पूर्वी एशिया से मध्य एशिया तक हो गया, जहाँ की अनेक आधुनिक लिपियों का विकास इसी लिपि से हुआ।

ई). गुप्त ब्राह्मी की पश्चिमी शाखा की पूर्वी उपशाखा से एक विशेष लिपि – सिद्ध मातृका अथवा न्यूनकोणीय लिपि का विकास हुआ।

उ). सातवीं शताब्दी के निकट उत्तर भारत की गुप्त ब्राह्मी लिपि तीन प्रमुख

रूपों में विकसित हुई, जिन्हें
(i) शारदा लिपि
(ii) कुटिल लिपि
(iii) नागरी अथवा प्राचीन नागरी

कहा जाता है। ये तीनों लिपियाँ ही आधुनिक उत्तर भारतीय लिपियों की जननी हैं।

ब्राह्मी लिपि से उद्भूत परवर्ती लिपियाँ :

ब्राह्मी की उत्तरी शैली से विकसित लिपियाँ –

गुप्त लिपि
कुटिल लिपि
नागरी लिपि
शारदा लिपि
बंगला लिपि

ब्राह्मी की दक्षिणी शैली से उद्भूत लिपियाँ –

पश्चिमी लिपि
मध्य प्रदेशी लिपि
तेलुगु - कन्नड़ी लिपि
ग्रन्थ लिपि
कलिंग लिपि
तमिल लिपि

ब्राह्मी से उद्भूत विदेशी लिपियाँ –

सिंहली लिपि
मालद्वीवी (माल्दिवी) लिपि
सीरो - मालावारी लिपि
हिन्देशियाई लिपियाँ
स्यामी लिपि
चम्पा लिपि
खमेर लिपि
बर्मी लिपियाँ
शान लिपियाँ
फिलीपाइनी लिपि

———ooo———ooo———